लीलाधर जगूड़ी की कविताओं में बाजार की उपस्थिति

Neha Kumari

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज मे ं घटित घटनाओं को एक सजग साहित्यकार अपनी रचनाओ ं में स्थान देता है। आज का समय भूमण्डलीकरण का समय है जिस ` वै"वीकरण, वि"वायन, बाजारीकरण, उदारीकरण आदि के नाम स ` भी जाना जाता है। समकालीन साहित्य तमाम विसंगतियों स ` जकड़ा हुआ साहित्य है। वर्तमान सस्ं कृति पर गौर करे ं तो यह बाजार संस्कृति जान पड़ती है और समकालीन परिवे"ा मे ं बाजार ने इस तरह स ` पाँव पसारा है कि सवं ेदनाएं सख्ू ा सी गई है, सांस्कृतिक मूल्य खत्म होत ` जा रहे है। वै"वक स्तर पर बाजार का यह वर्चस्ववादी कलवे र बीसवी ं भाताब्दीं मे ं वि"ोशकर सोवियत सघं ा के पतन के बाद भ्ारु हुआ था। अब बाजार के बिचौलिए दुनिया भर मे ं घूम रहे है। बाजार की सम्प्रभुता स ` बच निकलने की कोई चिन्ता भी नही ं है। अब पहल ` और आखिरी उपाय के रुप मे ं बाजार मे ं भारण लने ` के अतिरिक्त तीसरी दुनिया के लोगं ो के सामने कोई चारा भी नही ं बचा है। समकालीन कविता भी इसस ` अछूती नही ं है। समकालीन कविता के स"ाक्त कवि लीलाधर जगूड़ी समकालीन विसगं तियों को दिखाते है।

कवि लीलाधर जगूड़ी की कविताओं मे ं भी बाजार की उपस्थिति साफ दिखती है। वे कहते है ''साहित्य भी बाजार स ` अछूता नहीं रह सकता। बाजार और भूमंडलीकरण स ` अगर कोई चीज ज्यादा प्रभावित हो रही है, तो वह है व्यक्ति की, उत्पादन की और कलाओं की स्थानीयता। बाजार और भूमंडलीकरण किसी वस्तु की स्थानीयता को नश्ट कर देना चाहते है ं और आज बाजार हर चीज को वै"वक (ग्लोबल) बना देना चाहता है। भूमंडलीकरण और बाजार मे ं चाह ` जितनी बुराइयाँ हो, लेकिन एक खूबी भी है कि वह किसी वस्तु और किसी व्यक्ति को मात्र स्थानीय नही ं रहने देता।''[1]

लीलाधर जगूड़ी के कई काव्य सगं ्रह हैं जिनमें कवि बाजार की विसगं तियों को लके र चिन्तित दिखता है। मुख्य रुप स ` भय भी भाक्ति देता है', ई"वर की अध्यक्षता मे ं' तथा 'खबर का मुँह विज्ञापन से ढका है' मे ं कवि बाजार की व्यवस्थाओं को लके र स"ांकित दिखता है। अपने सगं ्रह 'खबर का मुँह विज्ञापन स ` ढका है' मे ं लीलाधर जगूड़ी लिखते है–

''चीजो ं के बारे ं मे ं अब सोचना सरल
नही ं रह गया है
क्योंकि अब चीजें भी हमारे बारे मे ं सोचने
लग गयी है।''[2]

जगूड़ी की कविताओं मे ं भाहर व्यक्ति की सवं दनाओ ं के ऊपर धलू चढ़ा देता है जहा ं व्यक्ति इस धलू को हटाने के लिए बाजार क ` आगो"ा में चला जाता और दिनानुदिन कुण्ठित होता जाता है। भौतिकता और अर्थ प्राप्ति की दौड़ मे ं व्यक्ति भूल जाता है कि वह म"ीन नहीं बल्कि इंसान है। जगूड़ी इस बाजार को भाहर के बीचों बीच देखते है–

''वैज्ञानिक बंधुओं ! मैं सारी चीजो ं का ठेकेदार हूँ
मिलकर आपका ` खु"ाी होगी।''[3]

प्राकृतिक हो या नैसर्गिक सभी उत्पादों को बाजार के हवाले कर दिया गया है। बाजार सौन्दर्य की भी कीमत लगाकर बेचता है। उसके दायरे मे ं चाहे प्रकृति हो या ई"वर सब समाहित हो गए है। 'ई"वर की अध्यक्षता मे ं' कवि इस बाजारीकरण का ` दिखता है–

"और हद तो यह थी कि उनमें स` जब भी किसी एक

ने

दुनिया को 'भव–सागर' कहा होगा

एस समय क्या

उनमे ं स` कोई नहीं समझ पा रहा होगा

कि वे राजनीति

और बाजार दाने ा` फैला रहे है?"[4]

कोई भी वस्तु इस बाजार मे ं कीमत बनने स` बच नही ं पाती है। कवि राजनीति और बाजार दोनो को समकालीन परिवे"ा में तेजी से पनपते देख रहा है।

समकालीन कवियों में लीलाधर जगूड़ी पहला और अकेला ऐसा कवि है जिसने प्रेम और बाजार के बीच ई"वर को रखा। कवि ने दिखाया कि भाहर का बाजारीकरण, निर्धन, बेराजे गार लोगा` के जीवन को और दुश्कर कर देता है। एक f"ाक्षित बेराजगार की व्यथा कथा 'बीए पास रिक"ा वाल` की कविता' मे ं जीवंत हो उठती है–

"उस जगह को याद रख हुए जिसे छाडे. आया हूँ

पहाड. की चोटी पर।"[5]

कवि इस बाजारीकरण और उपभोक्तावादी सस्ं कृति के बीच अनैतिकता का भाव देखता है। विकास की ऐसी स्थिति जिस पर कवि का मन व्यथित हो उठता है क्योंकि इस प्रगति और विकास में बाजार हावी रहता ह` ओर विकास के नाम पर मूल्यो ं का, अनैतिकता का व्यापार होता है। कवि कहता है–

"कोई बताने वाला है कोमलता, सहानुभूति और कोध

ये किस कंपनी के पेय पदार्थो ं के नाम होंगे परसों।"[6]

पूँजी के प्रभाव के बढ़ते मानवीय मूल्यो ं का दखल कम होता जा रहा है और समाज में अमानवीयता का भाव फैल रहा है। पूंजीवादी सभ्यता ने मनुश्य का` 'ाड्यंत्र का f"ाकार बनाया है। इस पूजं ीवादी और विज्ञान युग ने मनुश्य के साथ–साथ प्रकृति का` भी म"ाीन की बटन बना दिया है।

पूरे वि"व पर बाजारीकरण ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया है। बाजारीकरण का प्रभाव आर्थिक और राजनीतिक ही नही बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक रुप स` भी देखने को मिलता है। बाजार हमारी सस्ं कृति हमार` पर्यटन को कुत्सित कर रहा है। गावं नश्ट हो रहे है, भाहरीकरण का प्रभाव बढ़त` जा रहा है और इसी भाहरीकरण के प्रभाव के कारण मानवीय मूल्यों का घृणित रुप हमार` सामने उपस्थित हो रहा है। जगूड़ी जीवन के इन मूल्यो ं पर बाजार का कुत्सित प्रभाव देखकर दुखी है, वे दख्े ाते हे कि प्रेम भी इस बाजार स` अछत्ू ा नही ं है–

"प्रेम की बढ़ती जाती स"ाुल्क भौली को

न समझते हुए बाजार स` ऐसे गुजरे

जैसे गरमियो ं मे ं बर्फ की भारी–भारी सिल्लियाँ

ढोने वाले गधे।"[7]

कविता मे ं बढ़ते हुए यान्त्रीकरण के द्वारा एकान्तिक आनन्द की टूटती हुई लय के कारण ढ़ाते ी हुई जिन्दगी की भीड, सडक़ और आका"ा के द्वारा प्रतिकृत किया गया उतार चढ़ाव के कई दृ"य उनके सगं्रह 'ई"वर की अध्यक्षता मे' के 'विज्ञापन सुंदरी' कविता मे ं देखी जा सकती है। स्त्री अभिव्यक्ति के नाम पर बाजार के पास चली गई है अर्थात लज्जा और भार्म का स्थान बाले डनैस और फैंकनेस ने ल` लिया है। एक स्त्री विज्ञापन वाली माँ का रोल ज्यादा अच्छा निभा लेती है बरक्स वास्तविक मां की भूमिका मे ं लगभग वह असफल दिखती है। 'विज्ञापन सुंदरी' कविता मे ंइसे साफ तौर पर देखा जा सकता है –

''यह तो बाजार है जिसे अपने विज्ञापन के लिए वि"व सुंदरी की भी जरुरत है

वरना वि"व सुंदरी की भी क्या जरुरत है।''[8]

विज्ञापन का बाजार साहित्य और समाज पर इतना हावी है कि वि"व सुन्दरी को ही बाजार की चौखट पर लाकर नही ं खड़ा करता बल्कि माँ भी इस विज्ञापन की दुनिया का हिस्सा बनने स` नही ं बच पाती है। वे कहते

''प्रसव पीड़ा से गुजरी हुई माताएँ कहाँ है ?

कि विज्ञापन सुंदरियाँ

सुरक्षित बच्चों का खले कूद और उनकी ड्रेसें बताती हैं उनके खान–पान उनके उपहार गिनाती

है।''[9]

''वि"व बाजार की एकता कहीं न कहीं कभी न कभी वि"व मानव की एकता का मूल आधार बन जाएगी। लोग यह भूल जाते है ं कि विज्ञान ने क्षत्रे ीयता और स्थानीयता के बंधन तोड़ दिए है, लेकिन बाजार अभी क्षत्रे ीय सांस्कृतिक उत्पादनों की स्थानीयता को उनके सौंदर्य और उनकी उपयोगिता के साथ जीवित रख` हुए है। इसलिए सार्वभौमिकता और स्थानीयता का मिलान बिंदु बाजार मे ं एक बहुत जरुरी तत्व मुझे लगता है। रचना का उद्दे"य बाजार से बचना नही ं है, न आज कोई बाजार स` बचकर कुछ रच सकता है। लेकिन जो बचेगा वह रचेगा कैस`? अतं मे ं रघुवीर सहाय के भाब्दो ं में कहना चाहता हूँ– 'जा` रचेगा, वही बचेगा'।''[10]

जगूड़ी की कविताओं मे ं बाजार की उपस्थिति एक नि"चत उद्दे"य को लके र आती है जहाँ वे क्षत्रे ीयता को बचाते हुए वि"व बाजार के मंच पर स्पश्ट हस्तक्षेप करते है। कविताओ ं की सार्वभैमिकता के साथ विज्ञान से कदम ताल करते हुए नये मूल्यो ं का` प्रतिस्थापित करते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1 लीलाधर जगडू ी : मेर` साक्षात्कार, किताबघर प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008, पृ0 156

2 लीलाधर जगडू ी : खबर का मुँह विज्ञापन स` ढ़का है, वाणी प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम सस्ं करण 2008, पृ0 26

3 लीलाधर जगडू ी : भय भी भाक्ति देता है, इक्कीसवीं सदी का एक विज्ञापन, राजकमल प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1994, पृ0 111

4 लीलाधर जगडू ी : ई"वर की अध्यक्षता में, राजकमल प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999, पृ0 93

5 वही, पृ0 106

6 वही, पृ0 30

7 लीलाधर जगडू ी : जितने लागे उतने प्रेम, प्रेम मे ं निवे"ा, राजकमल प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2013, पृ0 38

8 लीलाधर जगडू ी : ई"वर की अध्यक्षता में, विज्ञापन सुंदरी, राजकमल प्रका"ान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999, पृ0 20

9 वही, पृ0 21

10 लीलाधर जगडू ी : मेरे साक्षात्कार, किताबघर प्रका"ान, नयी दिल्ली, पथम संस्करण 2008, पृ0 146